उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य

बनाम

जेड. यू. अंसारी

(सिविल अपील संख्या 9886/2016)

30 सितंबर, 2016

[टी. एस. ठाकुर, सी. जे. आई. और वी. गोपाल गौड़ा, जे.]

सिविल सेवा विनियम, 1975-विनियमन। 351-ए के तहत मंजूरी-अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने के लिए-संबंधित विभाग के प्रभारी मंत्री द्वारा दी गई, न कि राज्यपाल द्वारा-मंजूरी की वैधता-आयोजितः प्रति टी. एस. ठाकुर, सीजेआईः किसी सेवा में या सेवानिवृत्त कर्मचारी के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही का निर्देश देने की शक्ति राज्य सरकार द्वारा निर्वहन किया जाने वाला एक कार्यकारी कार्य है-उत्तर प्रदेश व्यवसाय (आवंटन) नियम और यू. पी. के संदर्भ में। कार्य नियम, 1975, उक्त कार्य संबंधित विभाग के प्रभारी मंत्री को आवंटित किया गया है-इस तरह की मंजूरी कानून में थी और संवैधानिक योजना में शासन के अर्थ में राज्य के राज्यपाल द्वारा पारित एक आदेश था। 351ए और इसलिए कानून में वैध-वी. गोपाल गौड़ा, जेः 1975 के अनुसार राज्यपाल द्वारा संविधान के अनुच्छेद 309 के तहत विधायी शक्ति का प्रयोग करते हुए नियम बनाए

गए हैं-यह संविधान के अनुच्छेद 166 के तहत उनकी कार्यकारी शक्ति से अलग है, जिसके तहत व्यापार लेनदेन नियम बनाए गए थे-शासन के तहत शक्ति। 1975 के विनियमों के 351-ए को राज्यपाल द्वारा प्रत्यायोजित किया जा सकता है, लेकिन ऐसा प्रतिनिधिमंडल व्यापार लेनदेन नियमों के तहत नहीं हो सकता है-यह दिखाने के लिए कोई सबूत नहीं होने के कारण कि सरकार ने विनियमन के तहत संबंधित मंत्री को अपनी शक्ति सौंप दी थी। 351-ए मंजूरी देने के लिए, मंत्री द्वारा दी गई मंजूरी को एक वैध मंजूरी नहीं कहा जा सकता है और इसलिए इसे कानून में कायम नहीं रखा जा सकता है-न्यायालय के अनुसारः राय के मतभेद को देखते हुए, मामले को उपयुक्त पीठ के समक्ष रखा जाना है-उत्तर प्रदेश व्यापार लेनदेन नियम, 1975-भारत का संविधान-अनुच्छेद, 154,163,166 और 309।

मामले को बड़ी पीठ को संदर्भित करते हुए, सी. जे. आई. टी. एस. ठाकुर के अनुसार।

अभिनिर्धारित 1. प्रत्यर्थी जैसे किसी सेवाकालीन या सेवानिवृत्त कर्मचारी के खिलाफ अनुशासनात्मक जांच का निर्देश देने की शक्ति राज्य सरकार द्वारा राज्य की कार्यकारी शक्ति का प्रयोग करते हुए निर्वहन किया जाने वाला एक कार्यकारी कार्य है। [पैरा 16] (973-डी)

2. किसी भी कदाचार की जांच का निर्देश देने की शक्ति निस्संदेह एक कार्यकारी कार्य है जिसका उपयोग सरकार द्वारा तब तक किया जा

सकता है जब तक कि किसी भी संवैधानिक या वैधानिक प्रावधानों द्वारा कोई सीमाएं नहीं लगाई जाती हैं जो वर्तमान मामले में कोई नहीं हैं। इस प्रकार, राज्यपाल अनुच्छेद 166 (3) के संदर्भ में ऐसे कार्यों को आवंटित करने के लिए सक्षम है जिनका निर्वहन किया जाना है और ऐसी शक्तियों का उपयोग मंत्रियों द्वारा कार्य के नियम तैयार करके किया जा रहा है। यह विशेष रूप से तब है जब संविधान में राज्यपाल से किसी सरकारी कर्मचारी के खिलाफ अनुशासनात्मक जांच को मंजूरी देने के कार्य का प्रयोग करने की आवश्यकता नहीं है, बजाय इसके कि राज्यपाल द्वारा बनाए जा सकने वाले नियमों के तहत इसे मंत्री पर छोड़ दिया जाए। [पैरा 9] (967-सी-ई]

3. राज्यपाल ने उत्तर प्रदेश व्यवसाय (आवंटन) नियम, 1975 बनाए हैं। उत्तर प्रदेश कार्य नियम, 1975 भी राज्यपाल द्वारा संविधान के अनुच्छेद 166 (3) के तहत बनाए गए हैं। उक्त नियमों का नियम 3 संबंधित विभाग के प्रभारी मंत्री को यू. पी. के तहत किसी विभाग को आवंटित व्यवसाय का निपटान करने का अधिकार देता है। (आबंटन) नियम, 1975 उन मामलों को छोड़कर जहां नियम अन्यथा प्रदान करते हैं। नियमों की अनुसूची 1 और 2 में उन विषयों को निर्धारित किया गया है जिन पर कार्य नियमों के तहत मामला या तो मंत्रिमंडल या मुख्यमंत्री या मुख्यमंत्री और राज्यपाल के पास जाना चाहिए। हालाँकि, उक्त दो

अनुसूचियों में ऐसा कुछ भी नहीं है जिसके लिए किसी सेवारत या सेवानिवृत्त सरकारी कर्मचारी के खिलाफ अनुशासनात्मक जांच शुरू करने के लिए मंजूरी देने की आवश्यकता हो, जिसे मंत्रिमंडल, मुख्यमंत्री या राज्यपाल के समक्ष लाया जाए। इसका मतलब यह होगा कि एक सेवानिवृत्त सरकारी कर्मचारी के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने की मंजूरी एक ऐसा मामला है जिससे संबंधित विभाग के प्रभारी मंत्री को निपटना है। [पैरा 9,10 और 12] (967-ई-एफ; 968-डी-ई; 969-सी-डी]

4. न तो संविधान और न ही संविधान के अनुच्छेद 166 (3) के तहत राज्यपाल द्वारा बनाए गए नियमों में वर्तमान जैसे मामलों में मंजूरी देने से संबंधित मामलों को केवल राज्यपाल और राज्यपाल द्वारा ही निपटाया जाना आवश्यक है। मंजूरी देने की शक्ति वैध रूप से संबंधित मंत्री को प्रदान की गई है और एक बार जब वह इस विषय पर निर्णय लेता है, तो यह कानून और संवैधानिक योजना में राज्यपाल द्वारा सिविल सेवा विनियम, 1975 के विनियमन 351-ए के उद्देश्य सहित सभी इच्छित उद्देश्यों के लिए लिया गया निर्णय या कार्रवाई माना जाता है। (पैरा 12) (969-ई-एफ]

5. वर्तमान मामले में, मंत्री के पास न केवल अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने की मंजूरी देने की शक्ति थी, बल्कि उन्होंने वास्तव में उस शक्ति का प्रयोग किया था। इस प्रकार जारी किए गए आदेश को उत्तर

प्रदेश सरकार के सचिव द्वारा सूचित किया गया था, लेकिन जब राज्यपाल के नाम पर संचार/आदेश व्यक्त नहीं किया गया था, तब भी वह संविधान के अनुच्छेद 166 (2) के तहत अभिनिर्धारित प्रतिरक्षा का हकदार था। इस प्रकार किया गया आदेश कानून और संवैधानिक योजना में विनियमों के विनियम 351-ए के अर्थ के भीतर राज्य के राज्यपाल द्वारा पारित एक आदेश था और इसलिए, कानून की नजर में मान्य था। [पैरा 16] [973-एफ; 974-ए-बी]

पी. यू. माइलाई ह्लिचो और अन्य बनाम मिजोरम राज्य और अन्य (2005) 2 एस. सी. सी. 92:2005 (1) एस. सी. आर. 279-इसके बाद आए।

शमशेर सिंह बनाम पंजाब राज्य और दूसरा (1974) 2 एस. सी. सी. 831:1975 (1) एस. सी. आर. 814; मध्य प्रदेश राज्य बनाम डॉ. यशवंत त्रिम्बक (1996) 2 एस. सी. सी. 305:1995 (6) पूरक। एस. सी. आर. 128-पर निर्भर।

बिहार राज्य बनाम रानी सोनाबती कुमार 1961 (1) एससीआर 728; नगर निगम दिल्ली बनाम बिड़ला कपास कताई और बुनाई मिल्स 1968 (3) एस. सी. आर. 251-निर्दिष्ट।

वी. गोपाल गौड़ा, जे. (असहमति)

अभिनिर्धारित 1. संविधान के अनुच्छेद 309 में संघ या राज्य की सेवा करने वाले व्यक्तियों की भर्ती और सेवा की शर्तों के विनियमन का प्रावधान है। सिविल सेवा विनियम, 1975 का विनियम 351-ए भारत के संविधान के अनुच्छेद 309 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए बनाया गया है। यह कानून की एक स्थिर स्थिति है कि संविधान के अनुच्छेद 309 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए, राज्यपाल एक विधायी क्षमता में कार्य करता है न कि कार्यकारी क्षमता में। [पैरा 10 और 11] [976-जी; 977-डी-ई)

बी. एस. यादव बनाम हरियाणा राज्य (1980) सप. एस. सी. सी. 524:1981 एस. सी. आर. 102-पर निर्भर था।

2. संविधान के अनुच्छेद 154 में राज्य की कार्यकारी शक्ति राज्यपाल में निहित करने का प्रावधान है। यह कानून का एक अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत भी है कि राज्यपाल संविधान के अनुच्छेद 166 के तहत कार्यकारी शक्ति का प्रयोग करता है। इस प्रकार संविधान का अनुच्छेद 166 राज्यपाल को राज्य सरकार के कार्य के सुविधाजनक लेन-देन और उक्त कार्य के अपने मंत्रियों के बीच आवंटन के लिए नियम बनाने की शक्ति प्रदान करता है। [पैरा 7,8 और 9] [975-बी-सी, जी-एच; 976-ए]

गुजरात राज्य बनाम आर. ए. मेहता (2013) 3 एस. सी. सी. 1:2005

(1) एस. सी. आर. 279-पर निर्भर था।

3. संविधान के अनुच्छेद 166 (3) और 309 के तहत शक्तियां पूरी तरह से अलग-अलग क्षेत्रों में काम करती हैं। इस प्रकार, यह बेतुका होगा यदि संविधान के अनुच्छेद 166 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए बनाए गए नियमों का उपयोग संविधान के अनुच्छेद 309 के तहत शक्ति का प्रयोग करते समय एक मानक के रूप में किया जाता है। तत्काल मामले में, उत्तर प्रदेश व्यापार लेनदेन नियम, 1975, राज्यपाल के नाम पर शक्ति का प्रयोग करने के लिए एक प्रभारी मंत्री को शक्ति प्रदान करता है। हालाँकि, इसका उपयोग मंत्री की कार्रवाई को सही ठहराने के लिए नहीं किया जा सकता है जब संविधान के अनुच्छेद 309 के तहत बनाए गए विनियमों के तहत शक्ति का प्रयोग जांच के दायरे में है। [पैरा 13] [979-सी-डी]

संपत प्रकाश बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य ए. आई. आर. 1970 एस. सी. 1118:1970 एस. सी. आर. 365-इसके बाद आया।

4. सिविल सेवा विनियम, 1975 के विनियम 351-ए के संदर्भ में एक सेवानिवृत्त कर्मचारी के खिलाफ कार्यवाही शुरू करने से पहले राज्यपाल की मंजूरी आवश्यक है। निस्संदेह, विनियमन 351-ए के तहत उक्त शक्ति राज्यपाल द्वारा प्रत्यायोजित की जा सकती है। हालांकि, संविधान के अनुच्छेद 166 के तहत प्रदत्त शक्ति के संबंध में व्यापार लेनदेन नियम,

1975 के तहत दिए गए प्रतिनिधिमंडल का उपयोग वर्तमान मामले में विकल्प के रूप में नहीं किया जा सकता है। [पैरा 14] [980-एफ-जी]

उत्तर प्रदेश राज्य बनाम हरिहर भोला नाथ (2006) 13 एस. सी. सी.

460:2006 (8) पूरक एस. सी. आर. 241;

उत्तर प्रदेश राज्य बनाम कृष्ण पांडे (1996) 9 एस. सी. सी. 395:1996 (3) एस. सी. आर. 183-संदर्भित।

5. इस प्रकार, जबकि यह तथ्य कि शक्तियाँ प्रत्यायोजित की जा सकती हैं, विवाद में नहीं है, यह स्थापित करने के लिए आवश्यक है कि प्रत्यायोजन वास्तव में हुआ है। इसके अलावा, यह स्थापित करना भी आवश्यक है कि जो सौंप दिया गया है वह उद्देश्य के लिए प्रासंगिक नियम के तहत प्रासंगिक शक्ति है। एक उद्देश्य के लिए शक्ति के प्रत्यायोजन का अर्थ अन्य सभी उद्देश्यों के लिए भी शक्ति का प्रत्यायोजन नहीं समझा जा सकता है। वर्तमान मामले में सवाल संविधान के अनुच्छेद 309 के तहत बनाए गए सिविल सेवा विनियमों के विनियम 351-ए के तहत शक्ति का वैधानिक प्रयोग है। [पैरा 16 और 17] [9S3-G-H; 9S4-A; 9S5-C-D]

एम. पी. राज्य बनाम यशवंत त्रिम्बक (1996) 2 एस. सी. सी. 305:1995 (6) पूरक एस. सी. आर. 128; शमशेर सिंह बनाम पंजाब

राज्य (1974) 2 एस. सी. सी. 831:1975 (1) एस. सी. आर. 814; बिहार राज्य बनाम रानी सोनाबती कुमार ए. आई. आर. 1961 एस. सी. 221:1961 एस. सी. आर. 728; गोदावरी शामरा पारुलेकर बनाम महाराष्ट्र राज्य ए. आई. आर. 1964 एस. सी. 1128:1964 एस. सी. आर. 446- विशिष्ट।

6. अभिलेख पर यह दिखाने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है कि राज्यपाल ने सिविल सेवा विनियम, 1975 के विनियम 351-ए के तहत मंजूरी देने के लिए संबंधित मंत्री को अपनी शक्ति सौंप दी थी, प्रभारी मंत्री द्वारा दी गई मंजूरी को वैध मंजूरी नहीं कहा जा सकता है और इसे कानून में कायम नहीं रखा जा सकता है। (पैरा 18) [985-डी-ई]

मामला कानून संदर्भः

सी. जे. आई. टी. एस. ठाकुर के निर्णय में

1975 (1) एस. सी. आर. 814 भरोसा किया पैरा 8

1995 (6) पूरक एस. सी. आर. 128 पर निर्भर था पैरा 13

1961 (1) एस. सी. आर. 728 निर्भर था पैरा 13

1968 (3) एस. सी. आर. 251 निर्भर था पैरा 13

2005 (1) एस. सी. आर. 279 अनुसरण किया पैरा 15

2005 (1) एस. सी. आर. 279 भरोसा किया पैरा 8

1981 एस. सी. आर. 102 भरोसा किया पैरा 11

1970 एस. सी. आर. 365 अनुसरण किया पैरा 12

2006 (8) सप्लीमेंट एस. सी. आर. 241 संदर्भित पैरा 14

1996 (3) एस. सी. आर. 183 संदर्भित पैरा 14

1995 (6) सप्लीमेंट एस. सी. आर. 128 विशिष्ट पैरा 14

1975 (1) एस. सी. आर. 814 विशिष्ट पैरा 15

1961 एस. सी. आर. 728 विशिष्ट पैरा 16

1964 एस. सी. आर. 446 विशिष्ट पैरा 17

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील सं. 9886/2016

सिविल विविध मामले में इलाहाबाद में उच्च न्यायालय के 03.02.2014 दिनांकित निर्णय और आदेश से। 2012 की रिट याचिका संख्या 19485:

गौरव भाटिया, ए. ए. जी., पवनश्री अग्रवाल, अभिषेक चौधरी, विज्ञापन बनाम, अपीलार्थियों के लिए उनके साथ।

सुब्रमण्यम प्रसाद, वरिष्ठ अधिवक्ता, अभिषेक स्वरूप, उत्कर्ष श्रीवास्तव, सुश्री रुचि कोहली, अधिवक्ता, उत्तरदाताओं के लिए उनके साथ।

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

टी. एस. ठाकुर, सीजेआई

1. अनुमति दी गई।

2. यह अपील इलाहाबाद में उच्च न्यायालय द्वारा 3 फरवरी, 2014 को पारित एक निर्णय और आदेश से उत्पन्न होती है, जिसके तहत प्रत्यर्थी द्वारा दायर 2012 की रिट याचिका को अनुमति दी गई है और 26 जून, 2011 को प्रत्यर्थी को जारी किए गए आरोप पत्र के आधार पर अनुशासनात्मक कार्यवाही को इस निर्देश के साथ रद्द कर दिया गया है कि इसमें रिट याचिकाकर्ता-प्रत्यर्थी सभी परिणामी लाभों का हकदार होगा।

3. उच्च न्यायालय के समक्ष प्रतिवादी-लिखित याचिकाकर्ता 26 फरवरी, 1973 को उत्तर प्रदेश राज्य के ग्रामीण अभियांत्रिकी विभाग के सहारनपुर प्रभाग में एक कनिष्ठ अभियंता के रूप में शामिल हुए। उन्हें 25 अप्रैल, 1981 को सहायक अभियंता के पद पर पदोन्नत किया गया था और 30 सितंबर, 2008 को सेवा से सेवानिवृत्त होने तक उन्हें प्रतापगढ़ मंडल में और उसके बाद कई अन्य स्थानों पर स्थानांतरित कर दिया गया था।

4. वित्तीय अनियमितताओं के कारण राज्य के खजाने को कथित रूप से 23,964 रुपये का आर्थिक नुकसान हुआ है, यह देखने के बाद ग्रामीण अभियांत्रिकी विभाग द्वारा अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने का प्रस्ताव रखा गया था और 7 जनवरी, 2011 को ग्रामीण अभियांत्रिकी विभाग, उत्तर प्रदेश सरकार के प्रभारी मंत्री द्वारा इसे मंजूरी दी गई थी। तदनुसार 27 जून, 2011 को प्रतिवादी को एक आरोप पत्र जारी किया गया था और मुख्य अभियंता (डब्ल्यू. बी.) को आरोपों की जांच करने के लिए पूछताछ अधिकारी के रूप में नामित किया गया था। पीड़ित, प्रतिवादी ने इलाहाबाद में उच्च न्यायालय के समक्ष 2012 की सिविल विविध रिट याचिका दायर की। उस रिट याचिका के समर्थन में आग्रह किया गया प्रमुख तर्क यह था कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 309 के तहत बनाए गए सिविल सेवा विनियम, 1975 के 351-ए के तहत राज्यपाल से वैध मंजूरी के अभाव में, प्रतिवादी के खिलाफ प्रस्तावित अनुशासनात्मक कार्रवाई कानूनी रूप से अस्वीकार्य थी। उस तर्क को इलाहाबाद उच्च न्यायालय की एक खंड पीठ का समर्थन मिला, जिसने, जैसा कि पहले देखा गया है, रिट याचिका को अनुमति दी है और प्रतिवादी को दिए गए आरोप पत्र सहित अनुशासनात्मक कार्यवाही को रद्द कर दिया है। उच्च न्यायालय का विचार है कि उत्तर प्रदेश सरकार के ग्रामीण अभियांत्रिकी विभाग के प्रभारी मंत्री द्वारा जारी मंजूरी के समर्थन में राज्य द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 166 पर भरोसा किया गया है और भारत के संविधान का

अनुच्छेद 309 अलग-अलग क्षेत्रों में काम करता है। उच्च न्यायालय ने घोषणा की कि यदि भारत के संविधान के अनुच्छेद 309 के तहत बनाए गए सेवा विनियमों में किसी सेवानिवृत्त कर्मचारी के खिलाफ विभागीय कार्यवाही शुरू करने से पहले राज्यपाल की मंजूरी की आवश्यकता होती है, तो ऐसी कोई भी मंजूरी राज्यपाल द्वारा स्वयं दी जानी चाहिए, न कि संबंधित विभाग के प्रभारी मंत्री द्वारा। उच्च न्यायालय ने कहा कि यू. पी. कार्य नियम, 1975 के संदर्भ में केवल ऐसे कार्य मंत्री द्वारा किए जा सकते हैं जो उक्त नियमों के तहत उन्हें आवंटित किए गए हैं। उच्च न्यायालय के अनुसार, यह बताने के लिए कुछ भी नहीं था कि एक सेवानिवृत्त सरकारी कर्मचारी के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही को मंजूरी देने की शक्ति मंत्री को सामान्य या मंत्री के विशेष निर्देशों द्वारा निपटाने के लिए आवंटित की गई थी। प्रत्यर्थी के खिलाफ विभागीय कार्यवाही शुरू करने के लिए मंत्री द्वारा दी गई मंजूरी, उस दृष्टिकोण से, ऐसी कार्यवाही को बनाए रखने के लिए अपर्याप्त थी। उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए तर्क का कुल योग विवादित निर्णय से निकाले गए निम्नलिखित अंश में निहित हैः

"हमारा मानना है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 309 के प्रावधान भारत के संविधान के अनुच्छेद 166 के तहत सरकारी कार्यों के संचालन के लिए एक अलग क्षेत्र में काम करते हैं। वे ओवरलैप नहीं कर

रहे हैं। इसलिए, यदि भारत के संविधान के अनुच्छेद 309 अर्थात् सिविल सेवा विनियम, 1975 के तहत बनाए गए सेवा नियमों के तहत यह प्रावधान किया गया है कि सेवानिवृत्त कर्मचारी पर आरोप पत्र की सेवा के साथ विभागीय कार्यवाही शुरू करने से पहले राज्यपाल की मंजूरी आवश्यक होगी, तो ऐसी मंजूरी राज्यपाल की होनी चाहिए, न कि कार्य नियम, 1975 के तहत बनाए गए उत्तर प्रदेश सचिवालय निर्देश 1982 के संदर्भ में मंत्री की। हम यह भी दर्ज कर सकते हैं कि उत्तर प्रदेश सचिवालय निर्देश 1982, अध्याय VII केवल यह प्रदान करता है कि कार्य नियम, 1975 के तहत किसी विभाग को आवंटित सभी व्यवसाय का निपटान प्रभारी मंत्री के सामान्य या विशेष निर्देशों (संदर्भ कार्य विनियम 3) द्वारा या उनके तहत किया जाना है। इसलिए, यह स्पष्ट है कि केवल कार्य नियम, 1975 के तहत विभाग को आवंटित किए गए ऐसे व्यवसाय का निपटान प्रभारी मंत्री के सामान्य या विशेष निर्देशों के तहत किया जा सकता है। हमारे सामने ऐसा कुछ भी नहीं दिखाया गया है जिससे हम यह स्वीकार कर सकें कि एक सेवानिवृत्त सरकारी कर्मचारी के संबंध में विभागीय कार्यवाही को मंजूरी देने की शक्ति को व्यापार विनियमों के तहत संबंधित मंत्री के सामान्य या विशेष निर्देशों के तहत निपटाने के लिए एक व्यवसाय के रूप में आवंटित किया गया है। इसलिए, हमें यह मानने में कोई संकोच नहीं है कि मामले के तथ्यों में व्यापार विनियमों के लिए संदर्भित मंत्री की मंजूरी राज्यपाल

की मंजूरी के बराबर नहीं होगी जैसा कि सिविल सेवा विनियम, 1975 के विनियम 351-ए द्वारा विचार किया गया है।

5. वर्तमान अपील, जैसा कि पहले देखा गया है, उच्च न्यायालय द्वारा लिए गए दृष्टिकोण की शुद्धता पर जोर देती है। इस विषय पर कानूनी स्थिति, मेरी राय में, इस न्यायालय के निर्णयों द्वारा उचित रूप से तय की गई है, जिसका मैं वर्तमान में उल्लेख करूंगा, लेकिन ऐसा करने से पहले मैं सिविल सेवा विनियम, 1975 के विनियम 351 ए को लाभप्रद रूप से निकाल सकता हूं जो निम्नानुसार हैः

"351-A. राज्यपाल के पास किसी पेंशन या उसके किसी भी हिस्से को स्थायी रूप से या एक निर्दिष्ट अवधि के लिए रोकने या वापस लेने का अधिकार है और यदि पेंशनभोगी को विभागीय या न्यायिक कार्यवाही में गंभीर कदाचार का दोषी पाया जाता है, या उसने ऐसा किया है, तो सरकार को हुए किसी भी आर्थिक नुकसान की पूरी या आंशिक पेंशन से वसूली का आदेश देने का अधिकार है। सेवानिवृत्ति के बाद पुनर्नियुक्ति पर प्रदान की गई सेवा सहित, अपनी सेवा के दौरान कदाचार या लापरवाही से सरकार को आर्थिक नुकसानः

बशर्ते कि-(क) ऐसी विभागीय कार्यवाहियां, यदि उस समय शुरू नहीं की जाती हैं जब अधिकारी सेवानिवृत्ति से पहले या पुनर्नियुक्ति के दौरान कर्तव्य पर था-

(i) राज्यपाल की मंजूरी के अलावा स्थापित नहीं की जाएगी,

(ii) ऐसी घटना के संबंध में होगी जो ऐसी कार्यवाहियों की स्थापना से चार साल से अधिक पहले नहीं हुई थी, और

(iii) ऐसे प्राधिकारी द्वारा और ऐसे स्थान या स्थानों पर संचालित की जाएगी जो राज्यपाल निर्देशित करे और उन कार्यवाहियों पर लागू प्रक्रिया के अनुसार जिस पर सेवा से बर्खास्तगी का आदेश दिया जा सकता है।

6. मैं इस स्तर पर भारत के संविधान के अनुच्छेद 163 का भी उल्लेख कर सकता हूं, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ यह अभिनिर्धारित किया गया है कि राज्यपाल मंत्रिपरिषद की सहायता और सलाह पर कार्य करने के लिए बाध्य है, सिवाय इसके कि वह संविधान द्वारा या उसके तहत अपने या उनमें से किसी भी कार्य को अपने विवेक से करने के लिए अपेक्षित हैः

"163. राज्यपाल को सहायता और सलाह देने के लिए मंत्रिपरिषद

(1) राज्यपाल को उनके कार्यों के निर्वहन में सहायता और सलाह देने के लिए मुख्यमंत्री के नेतृत्व में एक मंत्रिपरिषद होगी, सिवाय इसके

कि जहां तक इस संविधान द्वारा या उसके तहत अपने कार्यों का या उनमें से किसी का अपने विवेक से प्रयोग करने की आवश्यकता है

(2) यदि कोई प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या कोई मामला ऐसा मामला है या नहीं है जिसके संबंध में राज्यपाल को इस संविधान द्वारा या उसके तहत अपने विवेक से कार्य करने की आवश्यकता है, तो राज्यपाल का निर्णय अपने विवेक से अंतिम होगा और राज्यपाल द्वारा की गई किसी भी चीज़ की वैधता पर इस आधार पर प्रश्न नहीं उठाया जाएगा कि उसे अपने विवेक से कार्य करना चाहिए था या नहीं

(3) यह प्रश्न कि क्या कोई, और यदि ऐसा है तो मंत्रियों द्वारा क्या सलाह दी गई थी।

7. भारत के संविधान के अनुच्छेद 166 का भी उल्लेख किया जा सकता है जो सरकारी कार्यों के संचालन से संबंधित है और अन्य बातों के साथ-साथ यह प्रावधान करता है कि राज्य की सभी कार्यकारी कार्रवाई राज्यपाल के नाम पर की जाएगी। इसमें लिखा हैः

"166 (1) किसी राज्य की सरकार की सभी कार्यपालक कार्रवाई राज्यपाल के नाम से किए जाने के लिए व्यक्त की जाएगी
(2) राज्यपाल के नाम से बनाए गए और निष्पादित किए गए आदेश और अन्य लिखतों को राज्यपाल द्वारा बनाए जाने वाले नियमों में निर्दिष्ट

तरीके से प्रमाणित किया जाएगा और इस तरह से प्रमाणित किए गए निर्देश पर आदेश की वैधता पर इस आधार पर सवाल नहीं उठाया जाएगा कि यह राज्यपाल द्वारा बनाया गया या निष्पादित किया गया आदेश या लिखत नहीं है

(3) राज्यपाल राज्य सरकार के कामकाज के अधिक सुविधाजनक लेन-देन के लिए नियम बनाएगा, और उक्त कार्य के मंत्रियों के बीच आवंटन के लिए जहां तक यह राज्यपाल द्वारा या उसके अधीन कार्य नहीं है, नियम बनाएगा।

8. अनुच्छेद 163 (1) की व्याख्या करने वाले इस न्यायालय के शुरुआती फैसलों में से एक शमशेर सिंह बनाम पंजाब राज्य और दूसरा (1974) 2 एस. सी. सी. 831 में दिया गया था। इस न्यायालय ने उस मामले में अनुच्छेद 163 (ऊपर) की व्याख्या करते हुए दो व्यापक सिद्धांतों को मान्यता दी। सबसे पहले, इस न्यायालय ने घोषणा की कि राज्यपाल द्वारा अपने विवेक से संविधान द्वारा आवश्यक कार्यों का प्रयोग करने के अलावा राज्यपाल मंत्रिपरिषद की सहायता और सलाह पर कार्य करता है। दूसरा, इस न्यायालय ने घोषणा की कि राज्यपाल में निहित कार्य, चाहे वे कार्यकारी, विधायी या अर्ध-न्यायिक प्रकृति के हों और चाहे वे संविधान या क़ानून द्वारा निहित हों, उन्हें कार्य नियमों के तहत प्रत्यायोजित किया जा सकता है, जब तक कि किसी भी संवैधानिक या

वैधानिक प्रावधान से कोई विपरीत इरादा स्पष्ट रूप से स्पष्ट न हो। इस न्यायालय ने टिप्पणी कीः

"48. राष्ट्रपति के साथ-साथ राज्यपाल भी संवैधानिक या औपचारिक प्रमुख होते हैं। राष्ट्रपति के साथ-साथ राज्यपाल भी अपनी शक्तियों और कार्यों का प्रयोग अपने मंत्रिपरिषद की सहायता और सलाह पर संविधान द्वारा या उसके तहत उन्हें प्रदान की गई शक्तियों और कार्यों का प्रयोग करते हैं, सिवाय उन क्षेत्रों के जहां राज्यपाल को संविधान द्वारा या उसके तहत अपने विवेक से अपने कार्यों का प्रयोग करने की आवश्यकता होती है। जहाँ कहीं भी संविधान राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा किसी भी शक्ति या कार्य के प्रयोग के लिए राष्ट्रपति या राज्यपाल की संतुष्टि की अपेक्षा करता है, संविधान द्वारा अपेक्षित संतुष्टि राष्ट्रपति या राज्यपाल की व्यक्तिगत संतुष्टि नहीं है, बल्कि सरकार की मंत्रिमंडल प्रणाली में संवैधानिक अर्थों में राष्ट्रपति या राज्यपाल की संतुष्टि है, अर्थात अपनी मंत्रिपरिषद की संतुष्टि है जिसकी सहायता और सलाह पर राष्ट्रपति या राज्यपाल आम तौर पर अपनी सभी शक्तियों और कार्यों का प्रयोग करते हैं। इनमें से किसी भी दो अनुच्छेद 77 (3) और 166 (3) के तहत किए गए कार्य नियमों के तहत किसी भी मंत्री या अधिकारी का निर्णय क्रमशः राष्ट्रपति या राज्यपाल का निर्णय होता है। इन अनुच्छेदों में किसी भी प्रतिनिधि मंडल का प्रावधान नहीं था। इसलिए, कार्य नियमों के तहत

एक मंत्री या अधिकारी का निर्णय राष्ट्रपति या राज्यपाल का निर्णय होता है।

xxx xxx xxx

57. पूर्वगामी कारणों से हमारा मानना है कि राष्ट्रपति या राज्यपाल मंत्रिपरिषद की सहायता और सलाह पर कार्य करते हैं, जिसमें केंद्र के मामले में प्रधानमंत्री प्रमुख होते हैं और राज्य के मामले में मुख्यमंत्री प्रमुख होते हैं, उन सभी मामलों में जो कार्यपालिका में निहित होते हैं, चाहे वे कार्य कार्यकारी हों या विधायी। न तो राष्ट्रपति और न ही राज्यपाल को व्यक्तिगत रूप से कार्यकारी कार्यों का प्रयोग करना है........... "(जोर दिया गया)

9. तब सवाल यह है कि क्या किसी सरकारी कर्मचारी के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने की शक्ति, चाहे वह सेवा में हो या सेवानिवृत्त, सरकार के लिए एक कार्यकारी कार्य है। मेरा जवाब हां में है। किसी भी कदाचार की जांच का निर्देश देने की शक्ति निस्संदेह एक कार्यकारी कार्य है जिसका उपयोग सरकार द्वारा तब तक किया जा सकता है जब तक कि किसी भी संवैधानिक या वैधानिक प्रावधानों द्वारा कोई सीमाएं नहीं लगाई जाती हैं जो इस मामले में नहीं हैं। यदि वास्तव में ऐसा ही है, तो राज्यपाल अनुच्छेद 166 (3) के संदर्भ में ऐसे कार्यों को आवंटित करने के लिए सक्षम है जिनका निर्वहन किया जाना है और ऐसी शक्तियों

का उपयोग मंत्रियों द्वारा कार्य के नियम तैयार करके किया जा रहा है। यह विशेष रूप से तब है जब संविधान में राज्यपाल से किसी सरकारी कर्मचारी के खिलाफ अनुशासनात्मक जांच को मंजूरी देने के कार्य का प्रयोग करने की आवश्यकता नहीं है, बजाय इसके कि राज्यपाल द्वारा बनाए जा सकने वाले नियमों के तहत इसे मंत्री पर छोड़ दिया जाए। राज्यपाल ने इस मामले में उत्तर प्रदेश व्यवसाय (आवंटन) नियम, 1975 बनाए हैं। उक्त नियमों के नियम 2 में कहा गया हैः

"2(1) सरकार का कार्य उत्तर प्रदेश सचिवालय की धाराओं या विभागों में किया जाएगा जैसा कि राज्यपाल के सामान्य या विशेष आदेशों द्वारा निर्दिष्ट किया जा सकता है, जो समय-समय पर जारी किए जाते हैं। बशर्ते कि अगले आदेशों तक, इन नियमों के प्रारंभ से तुरंत पहले लागू आवंटन से संबंधित आदेश लागू रहेंगे। (2) उपनियम (1) के तहत उन्हें विशेष रूप से आवंटित या आवंटित किए गए विषयों के अलावा, उत्तर प्रदेश सचिवालय की सभी धाराओं या विभागों को निम्नलिखित कानूनों में से किसी के तहत आदेश जारी करने की शक्तियां होंगी, जहां तक विषय उन्हें आवंटित किया गया है और मुख्य सचिव के सामान्य निर्देशों के अधीन है।

(ए) भारत का रक्षा अधिनियम और उस समय लागू नियम;

(बी) आवश्यक सेवाओं या आवश्यक आपूर्ति के रखरखाव के लिए उस समय लागू कोई भी कानून।

(ग) तत्काल प्रभाव से लागू आवश्यक वस्तु अधिनियम;

(घ) तत्काल प्रभाव से भूमि अधिग्रहण से संबंधित कोई भी कानून;

(ङ) धारा या विभाग को आवंटित विषय से संबंधित किसी भी अपराध के लिए अभियोजन के लिए मंजूरी।

10. अब संविधान के अनुच्छेद 166 (3) के तहत राज्यपाल द्वारा बनाए गए उत्तर प्रदेश कार्य नियम, 1975 का भी संदर्भ दिया जा सकता है। उक्त नियमों का नियम 3 संबंधित विभाग के प्रभारी मंत्री को यू. पी. के तहत किसी विभाग को आवंटित व्यवसाय का निपटान करने का अधिकार देता है। (आबंटन) नियम, 1975 उन मामलों को छोड़कर जहां नियम अन्यथा प्रदान करते हैं। नियम 3 में लिखा हैः "कार्य का निपटानः अन्य विभागों के साथ परामर्श करने और मुख्यमंत्री, मंत्रिमंडल और राज्यपाल के मामलों को प्रस्तुत करने के संबंध में इन नियमों के प्रावधानों के अधीन, यू. पी. के कार्य के तहत एक विभाग को आवंटित सभी कार्य। (आबंटन) नियम, 1975. का निपटान प्रभारी मंत्री के सामान्य या विशेष निर्देश द्वारा या उसके तहत किया जाएगा।

11. कार्य नियमों के नियम 7 और 8 जो मंत्रिमंडल या मुख्यमंत्री या राज्यपाल या मुख्यमंत्री और राज्यपाल को मामले प्रस्तुत करने का प्रावधान करते हैं, इस उद्देश्य के लिए प्रासंगिक हैं और इन्हें निकाला जा

सकता हैः मंत्रिमंडल को मामले प्रस्तुत करना-इन नियमों की पहली अनुसूची में निर्दिष्ट सभी मामलों को मंत्रिमंडल के समक्ष लाया जाएगाः बशर्ते कि एक से अधिक विभागों से संबंधित कोई भी मामला, तात्कालिकता के मामलों को छोड़कर, तब तक मंत्रिमंडल के समक्ष नहीं लाया जाएगा जब तक कि सभी संबंधित विभागों से परामर्श नहीं किया जाता है। 8. मुख्यमंत्री और राज्यपाल के मामलों को प्रस्तुत करना-इन नियमों की दूसरी अनुसूची में निर्दिष्ट प्रकृति के सभी मामले, उन पर आदेश जारी करने से पहले, मुख्यमंत्री या राज्यपाल या मुख्यमंत्री और राज्यपाल को प्रस्तुत किए जाएंगे जैसा कि उसमें संकेत दिया गया है।

12. उपरोक्त नियमों में निर्दिष्ट अनुसूची I और 2 में उन विषयों को निर्धारित किया गया है जिन पर कार्य नियमों के तहत मामला या तो मंत्रिमंडल या मुख्यमंत्री या मुख्यमंत्री और राज्यपाल के पास जाना चाहिए। हालाँकि, उक्त दो अनुसूचियों में ऐसा कुछ भी नहीं है जिसके लिए किसी सेवारत या सेवानिवृत्त सरकारी कर्मचारी के खिलाफ अनुशासनात्मक जांच शुरू करने के लिए मंजूरी देने की आवश्यकता हो, जिसे मंत्रिमंडल, मुख्यमंत्री या राज्यपाल के समक्ष लाया जाए। इसका मतलब यह होगा कि एक सेवानिवृत्त सरकारी कर्मचारी के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने की मंजूरी एक ऐसा मामला है जिससे संबंधित विभाग के प्रभारी मंत्री को निपटना है। यह कहने के लिए पर्याप्त है कि न तो संविधान और न

ही अनुच्छेद 166 (3) के तहत राज्यपाल द्वारा बनाए गए नियमों में वर्तमान जैसे मामलों में मंजूरी देने से संबंधित मामलों को केवल राज्यपाल और राज्यपाल द्वारा ही निपटाया जाना आवश्यक है। मंजूरी देने की शक्ति वैध रूप से संबंधित मंत्री को प्रदान की गई है और एक बार जब वह इस विषय पर निर्णय लेता है, तो यह कानून और संवैधानिक योजना में राज्यपाल द्वारा सिविल सेवा विनियम, 1975 के विनियमन 351 (ए) के उद्देश्य सहित सभी इच्छित उद्देश्यों के लिए लिया गया निर्णय या कार्रवाई माना जाता है।

13. एम. पी. बनाम डॉ. यशवंत त्र्यंबक (1996) 2 एस. सी. सी. 305 के मामले में, यह न्यायालय एक ऐसे मामले पर विचार कर रहा था जिसमें पशु स्वास्थ्य और पशु चिकित्सा जैविक उत्पाद संस्थान के एक सेवानिवृत्त निदेशक के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू की गई थी, कार्यवाही शुरू करने से पहले एम. पी. सिविल सेवा पेंशन नियम, 1976 के तहत मंत्रिपरिषद की मंजूरी प्राप्त की गई थी। मंजूरी का आदेश कथित तौर पर राज्यपाल के नाम पर था जो मध्य प्रदेश सरकार के अवर सचिव के हस्ताक्षर के तहत दिया गया था। हालांकि, राज्य प्रशासनिक न्यायाधिकरण ने उपरोक्त नियमों के तहत वैध मंजूरी के अभाव में विभागीय जांच को रद्द कर दिया। बिहार राज्य बनाम रानी सोनाबती कुमार 1961 (1) एस. सी. आर. 728 और दिल्ली नगर निगम बनाम

बिड़ला कॉटन स्पिनिंग एंड वीविंग मिल्स 1968 (3) एस. सी. आर. 251 में इस न्यायालय के फैसलों पर भरोसा करते हुए, इस न्यायालय ने निम्नलिखित शब्दों में राज्य की अपील को स्वीकार कर लियाः

"14. विचाराधीन नियम में कोई संदेह नहीं है कि विभागीय कार्यवाही यदि उस समय शुरू नहीं की गई थी जब सरकारी कर्मचारी सेवा में था, चाहे वह उसकी सेवानिवृत्ति से पहले हो या उसकी पुनर्नियुक्ति के दौरान, राज्यपाल की मंजूरी के अलावा शुरू नहीं की जाएगी। विचार के लिए जो सवाल उठता है वह यह है कि क्या इसके लिए स्वयं राज्यपाल की मंजूरी की आवश्यकता है या उस मंत्रिपरिषद की भी मंजूरी हो सकती है जिसके पक्ष में राज्यपाल ने कार्य नियमों के तहत मामला आवंटित किया है। यह निर्विवाद है कि संविधान के अनुच्छेद 166 (3) के तहत राज्यपाल ने सरकार के कामकाज के सुविधाजनक लेन-देन के लिए नियम बनाया है और मामले में मुकदमा चलाने की मंजूरी के सवाल को मंत्रिपरिषद द्वारा कार्य नियमों के अनुसार निपटा गया था। संविधान के अनुच्छेद 154 के तहत, राज्य की कार्यकारी शक्ति राज्यपाल में निहित है और संविधान के अनुसार उनके द्वारा प्रत्यक्ष रूप से या उनके अधीनस्थ अधिकारियों के माध्यम से इसका प्रयोग किया जाता है। "कार्यकारी शक्ति" अभिव्यक्ति इतनी व्यापक है कि विधायी और न्यायिक कार्यों को हटाए जाने के बाद बचे सरकारी कार्यों के अवशेष को संदर्भित करती है।

XXXX XXXX XXXX

17. मंजूरी का आदेश (या एक सेवानिवृत्त सरकारी कर्मचारी पर मुकदमा चलाना) निस्संदेह सरकार की एक कार्यकारी कार्रवाई है। (संविधान के अनुच्छेद 166 (3) के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए राज्यपाल अपने सभी कार्यों को विभिन्न मंत्रियों को कार्य के नियम बनाकर आवंटित कर सकता है, सिवाय उन नियमों के जिनमें राज्यपाल को संविधान द्वारा अपने विवेक का प्रयोग करने की आवश्यकता होती है। संविधान के अनुच्छेद 166 (3) में "राज्य सरकार का कार्य" अभिव्यक्ति में वे कार्य शामिल हैं जिनका प्रयोग राज्यपाल को मंत्रिपरिषद की सहायता और सलाह के साथ करना है, जिनमें वे कार्य भी शामिल हैं जिनका प्रयोग करने का अधिकार उन्हें अपनी व्यक्तिपरक संतुष्टि पर और राज्य सरकार के वैधानिक कार्यों सहित है। न्यायालय ने गोक्लावरी शामराव पारुलेकर बनाम महाराष्ट्र राज्य (ए. आई. आर. 1964 एस. सी. 1128) मामले में निर्णय दिया है कि वे कार्य और कर्तव्य जो एक कानून द्वारा राज्य सरकार में निहित हैं, संविधान के अनुच्छेद 166 (3) के तहत बनाए गए कार्य नियमों द्वारा मंत्रियों को आवंटित किए जा सकते हैं। बिहार राज्य बनाम रानी सोनाबती कुमारी (ए. आई. आर. 1961 एस. सी. 221) मामले में, जहां बिहार भूमि सुधार अधिनियम, 1950 की धारा 3 (1) के तहत अधिसूचना जारी करने की शक्ति बिहार के राज्यपाल को प्रदान की गई है,

इस न्यायालय ने कहाः "अधिनियम की धारा 3 (1) इसके तहत अधिसूचना जारी करने की शक्ति प्रदान करती है, किसी भी अधिकारी को नहीं बल्कि राज्य सरकार को इस तरह से, हालांकि उस शक्ति का प्रयोग संविधान के अनुच्छेद 166 (3) के तहत राज्यपाल द्वारा बनाए गए कार्य के नियमों द्वारा शासित होगा।"

18. इसलिए, उन मामलों को छोड़कर जिनके संबंध में राज्यपाल से संविधान द्वारा या उसके तहत अपने विवेक से कार्य करने की आवश्यकता होती है, राज्यपाल की व्यक्तिगत संतुष्टि की आवश्यकता नहीं है और कोई भी कार्य मंत्रियों को आवंटित किया जा सकता है। (जोर दिया गया)

14. मंजूरी आदेश, मामले में, कोई संदेह नहीं है कि अवर सचिव के हस्ताक्षर के तहत जारी किया गया था और राज्यपाल के नाम पर होने का तात्पर्य नहीं है, लेकिन इससे कोई भौतिक अंतर नहीं पड़ता है क्योंकि संविधान के अनुच्छेद 166 (2) में प्रतिरक्षा इस तरह के आदेश के लिए भी उपलब्ध होगी, जल्द ही यह रिकॉर्ड पर सामग्री के आधार पर पाया जाता है कि वास्तव में व्यापार नियमों के तहत सक्षम प्राधिकारी द्वारा एक आदेश दिया गया था। त्र्यम्बक के मामले (ऊपर) में इस न्यायालय ने एम. सी. डी. बनाम बिड़ला कॉटन स्पिनिंग एंड वीविंग मिल्स (ऊपर) के फैसले पर भरोसा करते हुए कहा थाः

"12. यहां तक कि जहां सरकार के सचिव द्वारा यह संकेत दिए बिना आदेश जारी किया जाता है कि यह केंद्र सरकार के आदेश से या राष्ट्रपति के आदेश से है, यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि अनुच्छेद 166 (2) में प्रतिरक्षा उपलब्ध होगी यदि यह अन्य सामग्री से प्रतीत होता है कि वास्तव में निर्णय सरकार द्वारा लिया गया था। दिल्ली नगर निगम बनाम बिड़ला कॉटन, एस. पी. जी. और डब्ल्यू. वी. जी. मिल्स (ए. आई. आर. 1968 एस. सी. 1232) यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि वास्तव में केंद्र सरकार द्वारा अधिनियम के तहत आवश्यकता के अनुसार मंजूरी दी गई थी, हालांकि आदेश ने ऐसा होने का संकेत नहीं दिया था।

15. संवैधानिक योजना और सरकार की संसदीय/मंत्रिमंडल प्रणाली के लोकाचार को इस न्यायालय की एक संविधान पीठ द्वारा पी. यू. माइलाई ह्लिचो और अन्य बनाम मिजोरम राज्य और अन्य (2005) 2 एस. सी. सी. 92) में राज्यपाल की भूमिका और संतुष्टि पर उनके द्वारा शक्तियों के प्रयोग से संबंधित मामलों के संबंध में निम्नलिखित शब्दों में समझाया गया थाः

"14. हमारे संविधान में संघ और राज्यों दोनों के लिए ब्रिटिश मॉडल की सरकार की संसदीय या मंत्रिमंडल प्रणाली की परिकल्पना की गई है।

जैसा कि हमारे संविधान में सन्निहित है, मंत्रिमंडल प्रणाली के तहत राज्यपाल राज्य का संवैधानिक या औपचारिक प्रमुख होता है और वह संविधान द्वारा या उसके तहत उसे प्रदत्त अपनी सभी शक्तियों और कार्यों का उपयोग मंत्रिपरिषद की सहायता और सलाह पर करता है, सिवाय उन क्षेत्रों के जहां राज्यपाल को संविधान द्वारा या उसके तहत अपने विवेक से अपने कार्यों का प्रयोग करने की आवश्यकता होती है।

15. कार्यकारी शक्ति विधायी या कुछ न्यायिक कार्यों में भी भाग लेती है। जहाँ कहीं भी संविधान किसी भी शक्ति या कार्य के प्रयोग के लिए राज्यपाल की संतुष्टि की अपेक्षा करता है, संविधान द्वारा अपेक्षित संतुष्टि राज्यपाल की व्यक्तिगत संतुष्टि नहीं है, बल्कि सरकार की मंत्रिमंडल प्रणाली के तहत संवैधानिक अर्थों में संतुष्टि है। राज्यपाल मंत्रिपरिषद की सहायता और सलाह से संविधान द्वारा या उसके तहत उन्हें प्रदान किए गए कार्यों का प्रयोग करता है और वह संविधान के अनुच्छेद 166 (3) के तहत मंत्रियों के बीच कार्य के आवंटन द्वारा राज्य सरकार के कार्य के सुविधाजनक लेनदेन के लिए नियम बनाने में सक्षम है। यह अंग्रेजी संवैधानिक कानून का एक मौलिक सिद्धांत है कि मंत्रियों को प्रत्येक कार्यकारी कार्य के लिए जिम्मेदारी स्वीकार करनी चाहिए। यह भी ध्यान दिया जा सकता है कि राज्यपाल के नाम पर की गई कार्यकारी कार्रवाई के संबंध में, उस पर राज्य की किसी भी कार्यकारी कार्रवाई के

लिए मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है और अनुच्छेद 300 में विशेष रूप से कहा गया है कि किसी राज्य की सरकार राज्य के नाम पर मुकदमा कर सकती है या मुकदमा किया जा सकता है, बशर्ते उसमें लगाए गए प्रतिबंध हों। इस न्यायालय ने लगातार यह विचार रखा है कि राष्ट्रपति की शक्तियाँ और राज्यपाल की शक्तियाँ ब्रिटिश संसदीय प्रणाली के तहत क्राउन की शक्तियों के समान हैं। हमने राम जवाया कपूर बनाम पंजाब राज्य ए. आई. आर. 1955 एस. सी. 549, ए. संजीवी नायडू बनाम मद्रास राज्य (1970) 1 एस. सी. सी. 443, और यू. एन. आर. राव बनाम इंदिरा गांधी (1971) 2 एस. सी. सी. 63 में इस सिद्धांत का पालन किया।

16. उपरोक्त घोषणाओं के आलोक में मुझे यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं हैः

(i) प्रतिवादी जैसे किसी सेवाकालीन या सेवानिवृत्त कर्मचारी के खिलाफ अनुशासनात्मक जांच का निर्देश देने की शक्ति राज्य की कार्यकारी शक्ति का प्रयोग करते हुए राज्य सरकार द्वारा निर्वहन किया जाने वाला एक कार्यकारी कार्य है;

(ii) उत्तर प्रदेश के कार्य (आवंटन) नियमों और उत्तर प्रदेश के कार्य नियम 1975 के संदर्भ में, उक्त कार्य संबंधित विभाग के प्रभारी मंत्रियों को आवंटित किया गया है जैसे कि मामले में ग्रामीण इंजीनियरिंग विभाग;

(iii) मंत्री के पास न केवल अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने की मंजूरी देने की शक्ति थी, बल्कि उन्होंने वास्तव में उस शक्ति का प्रयोग किया था जब उन्होंने कहा थाः

"माननीय ग्रामीण इंजीनियरिंग सेवा मंत्री, लखनऊ।

अनुशासनात्मक जाँच की जाए और जाँच रिपोर्ट प्रस्तुत की जाए।

डॉ. जयवीर सिंह

ग्रामीण अभियांत्रिकी सेवा विभाग,

विदेशी कृषि व्यापार और निर्यात "

(iv) इस प्रकार जारी आदेश उत्तर प्रदेश सरकार के सचिव द्वारा प्रेषित किया गया था, लेकिन जब संचार/आदेश राज्यपाल के नाम से व्यक्त नहीं किया गया था, तब भी वह संविधान के अनुच्छेद 166 (2) के तहत अभिनिर्धारित प्रतिरक्षा का हकदार था।

(v) इस प्रकार बनाया गया आदेश कानून में था और संवैधानिक योजना में विनियमों के विनियम 351-ए के अर्थ के भीतर राज्य के राज्यपाल द्वारा पारित एक आदेश था और इसलिए कानून की नजर में वैध था।

17. परिणामस्वरूप, यह अपील सफल हो जाती है और इसके द्वारा इसकी अनुमति दी जाती है। उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को दरकिनार कर दिया गया है और प्रत्यर्थी द्वारा दायर 2012 की रिट याचिका संख्या 19485 को खारिज कर दिया गया है, जिसमें लागत का आकलन Rs.10,000/- (केवल दस हजार रुपये) किया गया है।

वी. गोपाल गौड़ा, जे. 1. मैंने वर्तमान अपील में भारत के विद्वान मुख्य न्यायाधीश द्वारा लिखे गए फैसले को पढ़ा है। हालाँकि, मैं विद्वान मुख्य न्यायाधीश की राय से सम्मानपूर्वक असहमत हूँ और इसके लिए अपने कारण दर्ज करता हूँ।

2. चूंकि मामले के प्रासंगिक तथ्यों को विद्वान मुख्य न्यायाधीश ने अपनी राय में कहा है, इसलिए संक्षिप्तता के लिए उन्हें फिर से नहीं कहा गया है।

3. तत्काल मामले में विचार के लिए जो संक्षिप्त बिंदु उत्पन्न होता है, वह यह है कि क्या तत्काल मामले में संबंधित विभाग के मंत्री द्वारा दी गई मंजूरी सिविल सेवा विनियम, 1975 के विनियम 351-ए के उद्देश्य के लिए एक वैध मंजूरी के बराबर है।

4. सिविल सेवा विनियम, 1975 भारत के संविधान के अनुच्छेद 309 के तहत बनाए गए हैं। उसी के विनियमन 351-ए के अनुसार,

सेवानिवृत्त हो चुके सरकार के एक अधिकारी के खिलाफ विभागीय कार्यवाही शुरू करने से पहले राज्यपाल की पूर्व मंजूरी प्राप्त करना आवश्यक है।

5. उत्तर प्रदेश कार्य नियम, 1975 को उत्तर प्रदेश राज्य के राज्यपाल द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 166 के तहत तैयार किया गया है। उक्त नियमों का नियम 3 इस प्रकार हैः

"3. कार्य का निपटान-अन्य विभागों के साथ परामर्श करने और मुख्यमंत्री, मंत्रिमंडल और राज्यपाल को मामले प्रस्तुत करने के संबंध में इन नियमों के प्रावधानों के अधीन, उत्तर प्रदेश (आवंटन) नियम, 1975 के तहत किसी विभाग को आवंटित सभी कार्यों का निपटान प्रभारी मंत्री के सामान्य या विशेष निर्देशों द्वारा या उनके तहत किया जाएगा।

6. प्रभारी मंत्री द्वारा दी गई मंजूरी की वैधता की जांच करने से पहले, इस मामले में प्रासंगिक संवैधानिक प्रावधानों की जांच करना महत्वपूर्ण है।

7. भारत के संविधान के अनुच्छेद 154 में राज्य की कार्यकारी शक्ति राज्यपाल में निहित होने का प्रावधान है और यह निम्नानुसार हैः

"154. राज्य की कार्यपालक शक्ति-(I) राज्य की कार्यपालक शक्ति राज्यपाल में निहित होगी और वह इस संविधान के अनुसार प्रत्यक्ष रूप से

या अपने अधीनस्थ अधिकारियों के माध्यम से इसका प्रयोग करेगा। संविधान का अनुच्छेद 166 इस प्रकार हैः

"166. किसी राज्य की सरकार का कार्य संचालन-(1) किसी राज्य की सरकार की सभी कार्यकारी कार्रवाई राज्यपाल के नाम से की जाएगी।

(2) राज्यपाल के नाम से बनाए गए और निष्पादित किए गए आदेशों और अन्य लिखतों को ऐसी रीति से प्रमाणित किया जाएगा जो राज्यपाल द्वारा बनाए जाने वाले नियमों में निर्दिष्ट किया जाए और इस प्रकार प्रमाणित किए गए किसी आदेश या लिखत की वैधता पर इस आधार पर प्रश्न नहीं उठाया जाएगा कि यह राज्यपाल द्वारा बनाया गया या निष्पादित किया गया आदेश या लिखत नहीं है।

(3) राज्यपाल राज्य सरकार के कार्य के अधिक सुविधाजनक लेन-देन के लिए और उक्त कार्य के मंत्रियों के बीच आवंटन के लिए नियम बनाएगा, जहां तक कि यह ऐसा कार्य नहीं है जिसके संबंध में राज्यपाल से इस संविधान द्वारा या उसके तहत अपने विवेक से कार्य करने की अपेक्षा की जाती है। (इस न्यायालय द्वारा जोर दिया गया)

8. इस प्रकार संविधान का अनुच्छेद 166 राज्यपाल को राज्य सरकार के कार्य के सुविधाजनक लेन-देन और उक्त कार्य के अपने मंत्रियों के बीच आवंटन के लिए नियम बनाने की शक्ति प्रदान करता है। उन

सभी मामलों को छोड़कर जिन पर राज्यपाल को अपने व्यक्तिगत विवेक का प्रयोग करते हुए कार्य करने की आवश्यकता होती है, मुख्यमंत्री की सलाह पर किसी मंत्री को आवंटित किया जाना चाहिए। मंत्रियों के बीच कार्य आवंटित करने के अलावा, राज्यपाल कार्य के सुविधाजनक लेन-देन के लिए मंत्रिपरिषद की सलाह पर नियम भी बना सकता है। इस प्रकार, इन प्रावधानों के अवलोकन से यह स्पष्ट हो जाता है कि संविधान के अनुच्छेद 166 के तहत कार्य नियम अनिवार्य रूप से राज्य सरकार के विभागों के काम-काज को आसान या सुविधाजनक बनाने के लिए बनाए गए हैं।

9. यह कानून का एक अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत भी है कि राज्यपाल संविधान के अनुच्छेद 166 के तहत कार्यकारी शक्ति का प्रयोग करता है। गुजरात राज्य बनाम आर. ए. मेहता के मामले में, इस न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया: "

संविधान के अनुच्छेद 154 के तहत, राज्य की कार्यकारी शक्तियां राज्यपाल में निहित हैं, जिनका प्रयोग वह संविधान के प्रावधानों के अनुसार सीधे या अपने अधीनस्थ अधिकारियों के माध्यम से कर सकता है। अनुच्छेद 161 राज्यपाल को बड़ी संख्या में शक्तियां प्रदान करता है, जिसमें माफी, स्थगन, विराम या सजा में छूट आदि शामिल हैं, ऐसी कार्यकारी शक्ति का प्रयोग उनके द्वारा केवल मंत्रिपरिषद की सहायता और सलाह के अनुसार किया जा सकता है। अनुच्छेद 162 में कहा गया है कि

राज्य की कार्यकारी शक्ति ऐसे सभी मामलों तक फैलेगी, जिनके संबंध में राज्य के विधानमंडल को कानून बनाने की शक्ति है। अतः उक्त प्रावधान राज्यपाल की शक्तियों का विस्तार करता है। संविधान का अनुच्छेद 166 (3) राज्यपाल को राज्य सरकार के व्यवसाय के अधिक सुविधाजनक लेनदेन के लिए नियम बनाने की शक्ति प्रदान करता है, और राज्य मंत्रियों के बीच इस तरह के व्यवसाय को आवंटित करने के उद्देश्य से भी।

10. संविधान का अनुच्छेद 309 जो संघ या राज्य की सेवा करने वाले व्यक्तियों की भर्ती और सेवा की शर्तों के विनियमन का प्रावधान करता है, यहाँ उद्धृत किया गया हैः

-"309. इस संविधान के प्रावधानों में संघ की सेवा करने वाले व्यक्तियों की भर्ती और सेवा की शर्तें, उपयुक्त विधानमंडल के अधिनियम संघ या किसी राज्य के मामलों के संबंध में सार्वजनिक सेवाओं और पदों पर नियुक्त व्यक्तियों की भर्ती और सेवा की शर्तों को विनियमित कर सकते हैंः

बशर्ते कि यह राष्ट्रपति या ऐसे व्यक्ति के लिए सक्षम होगा जो संघ के मामलों के संबंध में सेवाओं और पदों के मामले में निर्देश दे, और किसी राज्य के राज्यपाल या ऐसे व्यक्ति के लिए जो राज्य के मामलों के संबंध

में सेवाओं और पदों के मामले में निर्देश दे, ऐसी सेवाओं और पदों पर भर्ती और नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों को विनियमित करने वाले नियम बनाने के लिए, जब तक कि किसी अधिनियम द्वारा या उसके तहत उस ओर से प्रावधान नहीं किया जाता है।

(इस न्यायालय द्वारा जोर दिया गया)

11. तत्काल मामले में, इस तथ्य के बारे में कोई विवाद नहीं है कि सिविल सेवा विनियम, 1975 का विनियम 351-ए भारत के संविधान के अनुच्छेद 309 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए बनाया गया है। यह कानून की एक स्थिर स्थिति है कि संविधान के अनुच्छेद 309 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए राज्यपाल विधायी क्षमता में कार्य करता है न कि कार्यकारी क्षमता में। बी. एस. यादव बनाम हरियाणा राज्य के मामले में, इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने निम्नलिखित निर्णय दियाः

"44. अनुच्छेद 309 के परंतुक में, जहां तक सामग्री का संबंध है, यह प्रावधान है कि जब तक राज्य विधानमंडल किसी विशेष विषय पर कोई कानून पारित नहीं करता है, तब तक वह राज्य के राज्यपाल के लिए राज्य के न्यायिक अधिकारियों की भर्ती और सेवा की शर्तों को विनियमित करने वाले नियम बनाने के लिए सक्षम होगा। इस प्रकार राज्यपाल तब हस्तक्षेप करता है जब विधायिका कार्य नहीं करती है। इस प्रकार परंतुक के तहत राज्यपाल द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्ति एक ऐसी शक्ति है

जिसका प्रयोग करने के लिए विधायिका सक्षम है लेकिन वास्तव में अभी तक इसका प्रयोग नहीं किया गया है। यह विधायिका की विशेषताओं में भाग लेता है, न कि कार्यकारी शक्ति में। यह विधायी शक्ति है।

45. यह कि हमारे संविधान के तहत राज्यपाल के पास विधायी शक्ति है, निर्विवाद है और इसलिए, अनुच्छेद 309 के प्रावधान के तहत राज्यपाल की शक्ति विधायी शक्ति की प्रकृति में होने के बारे में कुछ भी विशिष्ट नहीं है। अनुच्छेद 158 के अनुसार, किसी राज्य का राज्यपाल राज्य के विधानमंडल का हिस्सा होता है। और राज्यपाल द्वारा विधायी शक्ति का सबसे स्पष्ट प्रयोग अनुच्छेद 214 द्वारा उन्हें अध्यादेश जारी करने की शक्ति है जब विधायिका का सत्र नहीं होता है। उस अनुच्छेद के तहत, वह उसी तरह की शक्ति का प्रयोग करता है जिसका प्रयोग विधायिका आम तौर पर करती है, कानून बनाने की शक्ति। संविधान के भाग VI के अध्याय IV का शीर्षक, जिसमें अनुच्छेद 214 आता है, महत्वपूर्ण हैः 'राज्यपाल की विधायी शक्ति'। अनुच्छेद 309 के परंतुक के तहत राज्यपाल की उचित नियम बनाने की शक्ति इसी तरह की है। यह विधायी शक्ति है। अनुच्छेद 214 के तहत, वह विधायिका को प्रतिस्थापित करता है क्योंकि विधायिका अवकाश में है। अनुच्छेद 309 के प्रावधान के तहत, वह विधायिका को प्रतिस्थापित करता है क्योंकि विधायिका ने अभी

तक इस विषय पर एक उपयुक्त कानून पारित करने के लिए अपनी शक्ति का प्रयोग नहीं किया है।

12. अनुच्छेद 166 (3) और 309 के तहत प्रदत्त शक्तियों के बीच के अंतर पर इस न्यायालय की एक संविधान पीठ द्वारा संपत प्रकाश बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य के मामले में चर्चा की गई थी।

11. उदाहरण के लिए, अनुच्छेद 77 (3) के तहत राष्ट्रपति और अनुच्छेद 166 (3) के तहत किसी राज्य के राज्यपाल को भारत सरकार या राज्य सरकार के कार्य के अधिक सुविधाजनक लेन-देन और उक्त कार्य के मंत्रियों के बीच आवंटन के लिए नियम बनाने का अधिकार है। यदि, इन प्रावधानों की व्याख्या के लिए, सामान्य खंड अधिनियम की धारा 21 लागू नहीं की जाती है, तो परिणाम यह होगा कि राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा एक बार बनाए गए नियम लचीले हो जाएंगे और मंत्रियों के बीच कार्य का आवंटन हमेशा पहले नियमों में निर्धारित रहेगा। स्पष्ट रूप से, बदलती स्थितियों के अनुरूप समय-समय पर इन नियमों में संशोधन करने की शक्ति मौजूद होनी चाहिए और यह शक्ति केवल सामान्य खंड अधिनियम की धारा 21 को लागू करके इन अनुच्छेदों में पाई जा सकती है। इसी तरह की अन्य नियम बनाने की शक्तियां हैं, जैसे कि संविधान के अनुच्छेद 309 के तहत सेवा नियम बनाने की शक्ति। उस शक्ति का समय-समय पर प्रयोग भी किया जाना चाहिए और इसमें उन नियमों में से किसी को

भी जोड़ने, संशोधन करने, बदलने या रद्द करने की शक्ति शामिल होनी चाहिए।

13. ऊपर उल्लिखित संवैधानिक प्रावधानों और मामले कानून के अवलोकन से यह स्पष्ट हो जाता है कि संविधान के अनुच्छेद 166 (3) और 309 के तहत शक्तियां पूरी तरह से अलग-अलग क्षेत्रों में काम करती हैं। इस प्रकार, यह बेतुका होगा यदि संविधान के अनुच्छेद 166 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए बनाए गए नियमों का उपयोग संविधान के अनुच्छेद 309 के तहत शक्ति का प्रयोग करते समय एक मानक के रूप में किया जाता है। तत्काल मामले में, उत्तर प्रदेश व्यापार लेनदेन नियम, 1975, राज्यपाल के नाम पर शक्ति का प्रयोग करने के लिए एक प्रभारी मंत्री को शक्ति प्रदान करता है। हालाँकि, इसका उपयोग मंत्री की कार्रवाई को सही ठहराने के लिए नहीं किया जा सकता है, जब संविधान के अनुच्छेद 309 के तहत बनाए गए विनियमों के तहत शक्ति का प्रयोग जांच के दायरे में है, जैसा कि तत्काल मामले में किया जाना चाहिए।

14. विशेष रूप से सिविल सेवा विनियमों के विनियम 351-ए के मुद्दे पर, उत्तर प्रदेश राज्य के मामले में, जहां प्रत्यर्थी के खिलाफ मंजूरी का आदेश, जो एक सरकारी विभाग में क्लर्क था, राज्यपाल के नाम पर सचिव द्वारा आदेश दिया गया था, इस न्यायालय द्वारा निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया थाः "।

किसी सरकारी कर्मचारी से राशि की वसूली के लिए कार्यवाही उस स्थिति में की जा सकती है जब उसे गंभीर कदाचार का दोषी ठहराया जाता है या उसकी सेवा के दौरान उसके कदाचार या लापरवाही से सरकार को आर्थिक नुकसान होता है। हालाँकि, कुछ प्रक्रियात्मक सुरक्षा उपायों को उसमें संलग्न परंतुक के संदर्भ में निर्धारित किया गया है, जिसमें राज्यपाल की मंजूरी का आदेश प्राप्त करने की आवश्यकता भी शामिल है। हालाँकि, मंजूरी के इस तरह के आदेश की आवश्यकता नहीं होगी यदि विभागीय कार्यवाही तब शुरू की गई है जब अपराधी ड्यूटी पर था। विनियमन 351-ए में संलग्न प्रावधान केवल मुख्य कार्यवाही को नियंत्रित करता है। यही बात उसमें परिकल्पित स्थिति की अनिवार्यताओं में भी लागू होगी, अर्थात् कार्यवाही भी सेवानिवृत्ति के बाद और न ही उससे पहले शुरू की गई थी।

इसके अलावा, यू. पी. राज्य बनाम कृष्ण पांडे-विनियम 351-ए का उल्लेख करने के बाद, इस न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:

"इसके पढ़ने से स्पष्ट रूप से संकेत मिलता है कि राज्यपाल के पास पेंशन या उसके एक हिस्से को स्थायी रूप से या एक निर्दिष्ट अवधि के लिए रोकने या निकालने की शक्ति और अधिकार सुरक्षित है। समान रूप से, उसे सरकार को हुए किसी भी आर्थिक नुकसान की पूरी या आंशिक पेंशन से वसूली का आदेश देने का अधिकार है, जब यह किसी विभागीय या न्यायिक कार्यवाही में पाया जाता है कि अपराधी गंभीर दुराचार का

दोषी था या उसने सेवानिवृत्ति के बाद अपने पुनर्नियुक्ति की अवधि सहित सेवा में बने रहने के दौरान अपने कदाचार या लापरवाही से सरकार को आर्थिक नुकसान पहुंचाया है. और इसे राज्यपाल की मंजूरी के बिना लागू नहीं किया जाएगा। यह एक ऐसी घटना के संबंध में होना चाहिए जो ऐसी कार्यवाही की स्थापना से 4 साल से अधिक पहले नहीं हुई हो।

उपर्युक्त मामला कानून के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि सिविल सेवा विनियम, 1975 के विनियम 351-ए के संदर्भ में एक सेवानिवृत्त कर्मचारी के खिलाफ कार्यवाही शुरू करने से पहले राज्यपाल की मंजूरी की आवश्यकता होती है। निस्संदेह, विनियमन 351-ए के तहत उक्त शक्ति राज्यपाल द्वारा प्रत्यायोजित की जा सकती है। हालांकि, संविधान के अनुच्छेद 166 के तहत प्रदत्त शक्ति के संबंध में व्यापार लेनदेन नियम, 1975 के तहत दिए गए प्रतिनिधिमंडल का उपयोग वर्तमान मामले में विकल्प के रूप में नहीं किया जा सकता है। एम. पी. बनाम यशवंत त्र्यंबक राज्य का मामला, जिस पर अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान अतिरिक्त महाधिवक्ता श्री गौरव भाटिया द्वारा मजबूत निर्भरता रखी गई है, भी गलत है, क्योंकि उस मामले में आवश्यक प्रश्न संविधान के अनुच्छेद 166 (3) के तहत राज्यपाल की कार्रवाई का प्रमाणीकरण था। उस मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि एक बार जब राज्यपाल संविधान के अनुच्छेद 166 (3) के तहत अपनी शक्तियों को

सौंप देते हैं, तो उन मामलों में उनकी व्यक्तिगत संतुष्टि की आवश्यकता नहीं होती है। यह विशेष रूप से निम्नानुसार आयोजित किया गया थाः पीठ ने कहा, "इस मामले को देखते हुए जब राज्यपाल ने संविधान के अनुच्छेद 166 (3) के तहत अपने कार्यों को आवंटित करने के लिए कार्य नियम बनाए हैं और यह मंत्रिपरिषद है जिसने प्रतिवादी के खिलाफ मुकदमा चलाने की मंजूरी देने का निर्णय लिया है, तो हम इसमें कोई कानूनी कमजोरी नहीं देखते हैं। न्यायाधिकरण ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने में कानूनी रूप से गलती की कि नियम के तहत आवश्यक मंजूरी राज्यपाल की मंजूरी है। "(इस न्यायालय द्वारा जोर दिया गया) उक्त मामले का उपयोग यह सुझाव देने के लिए नहीं किया जा सकता है कि एक बार राज्यपाल द्वारा अनुच्छेद 166 (3) के तहत शक्ति प्रत्यायोजित की जाती है, तो यह संविधान के अन्य अनुच्छेदों के तहत भी स्वचालित रूप से उनकी शक्तियों को छीन लेता है। संविधान के अनुच्छेद 166 (3) और 309 के तहत शक्तियां अलग-अलग क्षेत्रों में काम करती हैं, और राज्यपाल द्वारा स्पष्ट रूप से शक्ति प्रदान किए जाने के अभाव में एक का उपयोग दूसरे को प्रतिस्थापित करने के लिए नहीं किया जा सकता है।

15. शमशेर सिंह बनाम पंजाब राज्य के मामले में इस न्यायालय की सात-न्यायाधीशों की पीठ पर और अधिक निर्भरता रखी गई है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि राज्यपाल मंत्रिपरिषद की सहायता और

सलाह पर उनमें निहित शक्तियों का प्रयोग करता है। लेकिन उक्त फैसले का मामले के तथ्यों से भी कोई लेना-देना नहीं है। शमशेर सिंह (उपरोक्त) मामले में तथ्य स्थिति राज्यपाल की कार्यकारी शक्ति से संबंधित थी, जैसा कि राज्य की न्यायिक सेवाओं में जिला न्यायाधीशों के अलावा अन्य व्यक्तियों की नियुक्ति से संबंधित मामला था, जिसे संविधान के अनुच्छेद 234 के तहत राज्यपाल द्वारा किया जाना है। उस मामले में यह निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया थाः

29. कार्यकारी शक्ति को आम तौर पर अवशेष के रूप में वर्णित किया जाता है जो विधायी या न्यायिक शक्ति के भीतर नहीं आता है। लेकिन कार्यकारी शक्ति विधायी या न्यायिक कार्यों में भी भाग ले सकती है। राष्ट्रपति की सभी शक्तियाँ और कार्य, उनकी विधायी शक्तियों को छोड़कर, उदाहरण के लिए अनुच्छेद 123 में, अर्थात् अध्यादेश बनाने की शक्ति और राज्यपाल की सभी शक्तियाँ और कार्य, उनकी विधायी शक्ति को छोड़कर, उदाहरण के लिए अनुच्छेद 233 में अध्यादेश बनाने की शक्तियाँ संघ की कार्यकारी शक्तियाँ हैं जो अनुच्छेद 53 (1) के तहत राष्ट्रपति में निहित हैं और एक मामले में अन्य मामले में अनुच्छेद 154 (1) के तहत राज्यपाल में निहित राज्य की कार्यकारी शक्तियाँ हैं। अनुच्छेद 77 का खंड (2) या खंड (3) अनुच्छेद 77 के खंड (1) के तहत भारत सरकार की कार्यकारी कार्रवाई तक सीमित नहीं है। इसी तरह,

अनुच्छेद 166 का खंड (2) या खंड (3) अनुच्छेद 166 के खंड (I) के तहत राज्य सरकार की कार्यकारी कार्रवाई तक सीमित नहीं है। अनुच्छेद 77 के खंड (3) में "भारत सरकार का कार्य" अभिव्यक्ति और अनुच्छेद 166 के खंड (3) में "राज्य सरकार का कार्य" अभिव्यक्ति में सभी कार्यकारी कार्य शामिल हैं।

30. जिन सभी मामलों में राष्ट्रपति या राज्यपाल अपने मंत्रिपरिषद की सहायता और सलाह से संविधान द्वारा या उसके तहत उन्हें प्रदत्त अपने कार्यों का प्रयोग करते हैं, वे क्रमशः भारत सरकार या राज्य सरकार के कार्य के सुविधाजनक लेनदेन के लिए नियम बनाकर या अनुच्छेद 77 (3) और 166 (3) के अनुसार उक्त कार्य के अपने मंत्रियों के बीच आवंटन करके ऐसा करते हैं। जहां कहीं भी संविधान राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा किसी भी शक्ति या कार्य के प्रयोग के लिए राष्ट्रपति या राज्यपाल की संतुष्टि की अपेक्षा करता है, उदाहरण के लिए अनुच्छेद 123,213,311 (2) परंतुक (सी), 317,352 (1), 356 और 360 में संविधान द्वारा अपेक्षित संतुष्टि राष्ट्रपति या राज्यपाल की व्यक्तिगत संतुष्टि नहीं है, बल्कि सरकार की मंत्रिमंडल प्रणाली के तहत संवैधानिक अर्थों में राष्ट्रपति या राज्यपाल की संतुष्टि है। इसके कारण ये हैं। यह उस मंत्रिपरिषद की संतुष्टि है जिसकी सहायता और सलाह पर राष्ट्रपति या राज्यपाल आम तौर पर अपनी सभी शक्तियों और कार्यों का प्रयोग करते हैं। न तो

अनुच्छेद 77 (3) और न ही अनुच्छेद 166 (3) किसी भी शक्ति के प्रत्यर्पण का प्रावधान करता है। अनुच्छेद 77 (3) और 166 (3) दोनों में यह प्रावधान है कि अनुच्छेद 77 (3) के तहत राष्ट्रपति और अनुच्छेद 166 (3) के तहत राज्यपाल सरकार के कामकाज के अधिक सुविधाजनक लेन-देन और उक्त कार्य के मंत्रियों के बीच कामकाज के आवंटन के लिए नियम बनाएँगे। कार्य के नियम और उक्त कार्य के मंत्रियों के बीच आवंटन सभी इंगित करते हैं कि कार्य के नियमों के तहत किसी भी मंत्री या अधिकारी का निर्णय इन दो अनुच्छेदों के तहत किया जाता है, अर्थात राष्ट्रपति के मामले में अनुच्छेद 77 (3) और राज्य के राज्यपाल के मामले में अनुच्छेद 166 (3) क्रमशः राष्ट्रपति या राज्यपाल का निर्णय होता है। इसके अलावा, संविधान के अनुच्छेद 311 के संदर्भ में, यह निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया थाः "यह सिद्धांत कि केवल राष्ट्रपति या राज्यपाल को व्यक्तिगत रूप से किसी लोक सेवक को बर्खास्त करने या हटाने की खुशी का प्रयोग करना है, अनुच्छेद 311 में स्पष्ट शब्दों से खारिज किया जाता है कि कोई भी व्यक्ति जो सिविल सेवा का सदस्य है या संघ या राज्य के तहत सिविल पद रखता है, उसे उस अधीनस्थ प्राधिकरण द्वारा बर्खास्त या हटाया नहीं जाएगा जिसके द्वारा उसे नियुक्त किया गया था। "जिस प्राधिकारी द्वारा उन्हें नियुक्त किया गया था, उसके अधीनस्थ प्राधिकारी द्वारा खारिज या हटा दिए गए" शब्द इंगित करते हैं कि राष्ट्रपति या राज्यपाल की खुशी का प्रयोग ऐसे

अधिकारियों द्वारा किया जाता है जिन्हें राष्ट्रपति या राज्यपाल शक्ति प्रदान करते हैं या प्रतिनिधि करते हैं।

16. इसी तरह, राज्य ओ. जे. एल. जिलियार बनाम रानी सोनाबती कुमार के मामले में, मुद्दा यह थाः

"क्या यह राज्यपाल द्वारा दिया गया आदेश था या अनुच्छेद 154 (1) के भीतर उस संबंध में उनके द्वारा विधिवत अधिकृत किसी व्यक्ति द्वारा। यह मानते हुए भी कि आदेश व्यक्तिगत रूप से राज्यपाल से उत्पन्न नहीं हुआ था, इससे राज्य को कुछ भी लाभ नहीं होता है क्योंकि राज्यपाल अपने अधीनस्थों द्वारा अपने नाम पर की गई कार्रवाई के लिए जिम्मेदार रहता है।

इस प्रकार, जबकि यह तथ्य कि शक्तियाँ प्रत्यायोजित की जा सकती हैं, विवाद में नहीं है, यह स्थापित करने के लिए आवश्यक है कि प्रत्यायोजन वास्तव में हुआ है। इसके अलावा, यह स्थापित करना भी आवश्यक है कि जो सौंप दिया गया है वह उद्देश्य के लिए प्रासंगिक नियम के तहत प्रासंगिक शक्ति है।एक उद्देश्य के लिए शक्ति के प्रत्यायोजन का अर्थ अन्य सभी उद्देश्यों के लिए भी शक्ति का प्रत्यायोजन नहीं समझा जा सकता है।

17. गोदावरी शामराव पारुलेकर बनाम महाराष्ट्र राज्य के मामले में, इस न्यायालय की एक संविधान पीठ भारत की रक्षा नियम, 1962 के तहत प्रत्यायोजन की शक्ति पर विचार कर रही थी। राज्यपाल की आवंटन की शक्ति का निर्णय करते समय, यह निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया थाः

"संविधान के अनुच्छेद 166 (2) के तहत कार्य का आवंटन उन विशेष कानूनों के संदर्भ में नहीं किया जाता है जो आवंटन किए जाने के समय लागू हो सकते हैं; यह संविधान की सातवीं अनुसूची की तीन सूचियों के संदर्भ में किया जाता है, क्योंकि केंद्र और राज्य की कार्यकारी शक्ति का विस्तार उन मामलों तक होता है जिनके संबंध में संसद और राज्य का विधानमंडल कानून बना सकते हैं। इसलिए, जब व्यवसाय का आवंटन किया जाता है तो इसे सातवीं अनुसूची की तीन सूचियों के संदर्भ में किया जाता है और इस प्रकार कार्य नियमों में आवंटन उन सभी आकस्मिकताओं के लिए प्रदान करता है जो कार्यकारी शक्ति के प्रयोग के लिए उत्पन्न हो सकती हैं। इस तरह का आवंटन संसद द्वारा बनाए गए कानून के उपलब्ध होने से पहले भी किया जा सकता है जब भी संसदें सातवीं अनुसूची की सूची I के मामलों के संबंध में राज्य सरकार को शक्ति प्रदान करने वाला कानून बनाती हैं। इसलिए हमारी राय में यह आवश्यक नहीं था कि राज्यपाल द्वारा भारत रक्षा अध्यादेश, अधिनियम और नियमों के पारित

होने के बाद उन्हें हिरासत में रखने की शक्ति के अनुच्छेद 166 (3) के तहत आवंटन किया जाना चाहिए था; यह पर्याप्त होगा यदि उस विषय का आवंटन जिसे भारत रक्षा अध्यादेश, अधिनियम और नियम संदर्भित करते हैं, सात अनुसूची में तीन सूचियों के संदर्भ में किया गया है और यदि ऐसा आवंटन पहले से मौजूद है, तो इसका लाभ उठाया जा सकता है कि क्या और कब कानून पारित किए जाते हैं। सूची I, मद 9 में रक्षा, विदेश मामलों और भारत की सुरक्षा से जुड़े कारणों के लिए और सूची III की मद 3 में राज्य की सुरक्षा, सार्वजनिक व्यवस्था बनाए रखने या समुदाय के लिए आवश्यक आपूर्ति और सेवाओं के रखरखाव से जुड़े कारणों के लिए निवारक निरोध का प्रावधान किया गया है। अनुच्छेद 166 के तहत किए गए व्यवसाय का आवंटन सातवीं अनुसूची की तीन सूचियों में इन प्रविष्टियों के अनुसरण में है और जब भी इन प्रविष्टियों से संबंधित कोई कानून बनाया जाता है तो इसका उपयोग किया जा सकता है और राज्य सरकार को उस कानून के तहत कार्य करने की शक्ति प्रदान की जाती है। अपीलार्थियों का यह तर्क कि भारत रक्षा अध्यादेश, अधिनियम और नियम पारित होने के बाद राज्यपाल द्वारा अनुच्छेद 166 (3) के तहत नया आवंटन किया जाना चाहिए था, इसलिए विफल होना चाहिए।

(इस न्यायालय द्वारा जोर दिया गया)

उपरोक्त उद्धरण के अवलोकन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उपरोक्त मामले में भी, यह न्यायालय केवल संविधान के अनुच्छेद 166 (3) के तहत शक्ति के कार्यकारी प्रयोग से संबंधित था। इस प्रकार, इन मामलों का तत्काल मामले में तथ्य स्थिति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है, क्योंकि वे राज्यपाल द्वारा शक्ति के कार्यकारी प्रयोग से निपटते थे। इस मामले में सवाल भारत के संविधान के अनुच्छेद 309 के तहत बनाए गए सिविल सेवा विनियमों के विनियमन 351-ए के तहत शक्ति का वैधानिक प्रयोग है।

18. रिकॉर्ड पर यह दिखाने के लिए कोई सबूत नहीं है कि राज्यपाल ने सिविल सेवा विनियम, 1975 के विनियम 351-ए के तहत मंजूरी देने के लिए संबंधित मंत्री को अपनी शक्ति सौंप दी थी, प्रभारी मंत्री द्वारा दी गई मंजूरी को वैध मंजूरी नहीं कहा जा सकता है और इसे कानून में कायम रखा जा सकता है। उसी को अलग रखा जा सकता है और तदनुसार अलग रखा जाता है। तदनुसार, अपील खारिज कर दी जाती है।

आदेश

1. माननीय मुख्य न्यायाधीश ने अपनी ओर से निर्णय सुनाया, हस्ताक्षरित रिपोर्ट करने योग्य निर्णय के संदर्भ में अपील की अनुमति दी।

2. माननीय न्यायमूर्ति श्री वी. गोपाल गौड़ा ने माननीय मुख्य न्यायाधीश द्वारा व्यक्त किए गए विचारों से असहमत होकर अलग निर्णय सुनाया और अपील को खारिज कर दिया।

3. मतभेद को देखते हुए रजिस्ट्री को मामले को माननीय मुख्य न्यायाधीश के समक्ष रखने का निर्देश दिया जाता है, ताकि मामले की सुनवाई के लिए एक उपयुक्त पीठ का गठन किया जा सके।

कल्पना के. त्रिपाठी

मामले ने बड़ी पीठ को संदर्भित किया।

यह अनुवाद आर्टिफ़िश्यल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" की सहायता से अनुवादक सपना राजपुरोहित द्वारा किया गया है ।

अस्वीकरण - यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा मे समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा मे अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अँग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अँग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।